ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 197-199
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

साहित्य और समाज

जानकी प्रसाद
शोध अध्येता, हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, समरहिल–शिमला (हिमाचल प्रदेश) भारत
Received- 30.10. 2019, Revised- 05.11.2019, Accepted - 08.11.2019 E-mail: tilakgraphics@gmail-com

सारांश : *साहित्य उस समाज की जिसमें उसकी रचना हुई है, उसका सम्पूर्ण ब्यौरा प्रस्तुत करता है। साहित्य मानवीय अनुभूतियों, भावों, संवेगों तथा सामाजिक गतिविधियों का परिष्कृत एवं परिमार्जित रूप होता है। साहित्य में सम्पूर्ण समाज का हित सन्निहित रहता है। साहित्य एक ऐसी निधि है जो मनुष्य समाज को अज्ञान, दारिद्रय, रोग–शोक तथा स्वार्थपन से बचाकर उसमें आत्मबल तथा सद्भावना का संचार करती है। साहित्य के माध्यम से ही मानव समाज का चतुर्मुखी विकास संभव होता है। बाबू श्यामसुंदर दास ने साहित्य और समाज निबंध में लिखा है– ''जैसे भौतिक शरीर की स्थिति और उन्नति बाह्य पंचभूतों के कार्यरूप प्रकाश, वायु जलादि की उपयुक्तता पर निर्भर है, वैसे ही समाज के मस्तिष्क का बनना बिगड़ना साहित्य की अनुकूलता पर अवलंबित है अर्थात मस्तिष्क के विकास और वृद्धि का मुख्य साधन साहित्य है।''1 इस प्रकार समाज सापेक्ष साहित्य व्यक्ति के बहुमुखी विकास में सहायक होता है। साहित्य ही व्यक्ति को उचित–अनुचित का ज्ञान कराता है। साहित्यकार ही साहित्य के माध्यम से सामाजिक उथल–पुथल को संतुलित बनाए रखता है तथा समाज को सद्बुद्धि प्रदान कर कर्त्तव्यनिष्ठ बनाता है।*

कुंजी शब्द– साहित्य, मानवीय अनुभूतियों, भावों, संवेगों, परिष्कृत, परिमार्जित, दारिद्रय, आत्मबल, चतुर्मुखी।

साहित्य समाज के संबंध में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है ''साहित्य मानव–जीवन से सीधा उत्पन्न होकर सीधे मानव–जीवन का प्रभावित करता है। साहित्य पढ़ने से हम जीवन के साथ ताजा और घनिष्ठ संबंध स्थापित करते हैं। साहित्य में उन सारी बातों का जीवंत विवरण होता है जिसे मनुष्य ने देखा है, अनुभव किया है, सोचा है और समझा है। जीवन के जो पहलू हमें नजदीक से और स्थायी रूप से प्रभावित करते हैं उनके विषय में मनुष्य के अनुभवों के समझने का एकमात्र साधन साहित्य है।''2 इस प्रकार साहित्य शाश्वत है, गतिमान है। साहित्य मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से जुड़ा हुआ है अर्थात जीवन की जहां तक गति है वहां तक साहित्य का क्षेत्र है। साहित्य जीवन के प्रत्येक क्रिया कलापों से संबंधित है। कहा जा सकता है कि साहित्य समाज की दैनन्दिनी है।

क्योंकि समाज की प्रतिदिन की दिनचर्या का विवरण साहित्य में देखने को मिलता है। साहित्य सभी मानव समाज के अनुभवों को भी समझता है तथा उनको विकसित भी करता है।

साहित्य और समाज पर विचार करते हुए श्यामसुंदर दास ने लिखा है– ''किसी जाति के साहित्य को देखकर हम यह स्पष्ट बता सकते है कि उसकी सामाजिक अवस्था कैसी है; वह सभ्यता की सीढ़ी के किस डंडे तक चढ़ सकी है। साहित्य का मुख्य उद्देश्य विचारों के विधान तथा घटनाओं की स्मृति को संरक्षित रखना है।''3 स्पष्टतः कहा जा सकता है कि साहित्य समाज के प्रत्येक जाति, समुदाय, धर्म तथा रीति–रिवाज को व्यक्त करने का साधन है। इसके माध्यम से समाज के किसी भी पहलू को किसी भी समय उसके विकास, विस्तार तथा प्रगति को जाना जा सकता है। यही कारण है कि अतीत की घटनाओं, सामाजिक स्थिति तथा समाज का प्रत्येक वर्ग वर्तमान रूप धारण करने से पूर्व कितने पायदानों का सहारा लिया है, ऐसी स्थिति को साहित्य के माध्यम से आसानी से समझा जा सकता है।

साहित्य समाज का दीपक है जो समाज को अनुशासन, अधिकार तथा कर्त्तव्य का बोध कराता है। लेकिन प्रत्येक साहित्य का समाज से घनिष्ठ संबंध होता है यह कहना अत्युक्ति होगा। हर एक साहित्य से ऐसी आशा नहीं रख सकते क्योंकि कुछ साहित्य का समाज से विस्तृत संबंध होता है तो कुछ का संकुचित। इस संबंध में स्वयं प्रकाश लिखते है, ''अपने समाज और समाज में साहित्य का हस्तक्षेप सीमित ही होता है, लेकिन सच्चा साहित्य समाज की सतर्क आंख होता है, और मैं मानता हूँ कि वह है भी।''4 इस प्रकार साहित्य को समाज के संबंध में कई रूपों में देखते है।

जिस साहित्यकार में लोभ का त्याग होगा, प्रदर्शनप्रियता से दूर होगा, संवेदनशील होगा, निष्पक्ष होगा तथा समाज से संबंध रखकर यथार्थ आदि को व्यक्त करेगा उसका साहित्य निश्चित रूप से बहुमूल्य तथा उपयोगी होता है जो साहित्य अपने समय और समाज का होता है वही वास्तविक सच्चा तथा प्रासंगिक साहित्य होता है। कुछ

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

साहित्य धनार्जन हेतु, प्रसिद्धि हेतु, पुरस्कार हेतु तथा संख्या बढ़ाने की दृष्टि से लिखा जाता है। इस प्रकार के साहित्य का न तो सामाजिक सरोकार होता है और न ही मानव समाज के हित का होता है। ऐसा साहित्य अस्तित्व विहीन होता है। अतः साहित्य का धर्म समाज को उचित पथ प्रदर्शन कराना है। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के शब्दों में–

निडर आगे बढ़ो
तुम्हारी राह में एक छोटा सा
बाँस का पुल है।5

'बाँस का पुल' एक ऐसे व्यक्ति का प्रतीक है जो संघर्षों से टकराने की अनूठी शक्ति रखता है। भले ही वह लचकता हो, चरमराता हो और टूटने को हो जाता हो, पर निडर होकर आगे बढ़ने की शक्ति और प्रेरणा देता है। इस कविता के माध्यम से कवि समाज को अपने अधिकारों के लिए तथा सामाजिक विसंगतियों के खिलाफ लड़ने के लिए प्रोत्साहित करता है। इनका कहना है कि यदि तुम किसी विचार अथवा संघर्ष को लेकर आगे बढ़ते हो तो अनेक लोग जो बाँस के पुल के समान कमजोर तथा जिनमें अभिव्यक्ति की शक्ति नहीं है वे भी आपके साथ हाथ से हाथ मिलाकर आंदोलन में सहयोगी होंगे। इस प्रकार साहित्य मनुष्य में उत्साह, ऊर्जा, विश्वास आदि उत्पन्न करके स्वयं के लिए तथा सामाजिक विकास में सहायक सिद्ध होता है।

समय के साथ समाज तथा व्यक्ति में अपेक्षाकृत बदलाव होते रहते हैं। सामाजिक सरोकार से संबंधित साहित्य हमेशा गतिशील रहता है। प्रत्येक साहित्यकार का भी यही दायित्व होता है कि वह समाज से संबंध स्थापित करता हुआ गतिमान रहे। इस संबंध में विद्याधर शुक्ल ने लिखा है ''जो साहित्यबोध समाज और गांव के अनुकूल होता है। वह बदलता रहता है। जो कबीर का दायित्व था, वह दायित्व हमारा नहीं होता। कबीर का दायित्व, तुलसीदास का दायित्व नहीं हो सकता। जो तुलसीदास का दायित्व, वह भारतेन्दु का नहीं हो सकता। जो भारतेन्दु का दायित्व था वह प्रेमचंद का नहीं हो सकता। जो प्रेमचंद का था वह हमारा नहीं। क्योंकि वह जमाना नहीं रहा।''6 इस प्रकार समय नदी के वेग की तरह सदैव गतिमान है। इसके साथ–साथ समाज में परिवर्तन के रूप में विकास होता रहता है। साहित्य का भी यही कर्त्तव्य बनता है कि अपने समय को भलीभांति, अवलोकन कर समझे तत्पश्चात् विवेचन तथा विश्लेषण करे। समाज में ऐसे साहित्य की आवश्यकता है जो वर्तमान परिस्थिति को समझने तथा सुचारू रूप से जीवन जीने में सहायक हो सके। पहले की तरह इस समय भी साहित्य का कर्त्तव्य है कि किंकर्तव्यविमूढ़ होते समाज को एक नई तथा उचित दिशा प्रदान करें।

साहित्य समाज का दर्पण होता है और दर्पण का कार्य बिना किसी भेद के भले–बुरे सब को समान रूप से देखना है। उसी प्रकार साहित्य भी समाज के सभी पक्षों को ग्रहण कर मानवीयता को स्थापित करता है। साहित्य जनता को उसकी वर्तमान स्थिति से अपने साथ लेकर उसकी सांस्कृतिक रूचि तथा व्यक्तित्व की उत्कृष्टता से परिचित करता है। साहित्य का धर्म केवल सामाजिक विसंगतियों को उजागर करना मात्र नहीं है बल्कि अपने माध्यम से समाज में सद्विचार अच्छे संस्कार तथा मानवीय गुणों को उनके अंदर प्रविष्ट कराने का प्रयास होता है। इस विषय पर विचार करते हुए डॉ. सुधेश ने लिखा है ''जनता का साहित्य आम आदमी के कष्टों–अभावों की रूदन–गाथा नहीं है। वह जनता का मनोरंजन कराता है, उसे उच्च सांस्कृतिक मूल्यों की ओर प्रेरित करता है और पाठक के व्यक्तित्व का संस्कार करके उसे मानवीय संस्पर्श भी प्रदान करता है।''7 इस प्रकार साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होता है। समाज के सभी गुण–दोषों को उजार कर मनुष्य में भाई–चारे की भावना का विचार, विश्वबन्धुत्व की भावना, सहयोग की भावना आदि अनेक सत्कर्मों के प्रति विचार तथा विकास साहित्य के माध्यम से ही संभव है।

साहित्य एक विचार है, संस्कार है, निर्माण है। साहित्य समाज को शिक्षित कर सही–गलत का पहचान कर अपने जीवन का उद्देश्य पूर्ण बनाने तथा स्वयं के अनुसार अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने को सिखाता है। साहित्य भौतिक सुख का साधन नहीं है, साहित्य का काम समाज को रोजगार उपलब्ध कराना नहीं है, साहित्य का काम किसी क्षेत्र में प्रशिक्षण देकर बुद्धिजीवी बनाना नहीं है बल्कि साहित्य का धर्म केवल समाज में उत्तम संस्कार विकसित करना है जिससे समाज खुद अपने मार्ग का चयन कर सके। अपने विचार व्यक्त करते हुए सच्चिदानंद वात्स्यायन ने लिखा है ''मेरा निश्चित विचार है कि समाज की पार्थिव आवश्यकताओं की पूर्ति का माध्यम साहित्य को नहीं मानना चाहिए। उसके लिए विज्ञान, तकनालाजी, राजनीति आदि उचित माध्यम है। समाज को यानी उसकी इकाईयों को बौद्धिक क्षमता प्रदान करना भी साहित्य का काम नहीं है। उसके लिए दर्शन तर्कशास्त्र जैसे विषय है। साहित्य का सरोकार मनुष्य की संस्कारिता का निर्माण करना या उसका परिमार्जन करना है।''8 इस प्रकार साहित्य भारतीय समाज के उच्चतर जीवन मूल्यों जैसे अहिंसा, त्याग, परोपकार तथा करूणा दया आदि के माध्यम से समाज में समभाव, सुख, समृद्धि को स्थापित करता है।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

साहित्य के ऐसे शुभ विचार स्वास्थ्य समाज की स्थापना करते है।

समय के साथ समाज परिवर्तनशील है। परिवर्तित होते समाज में साहित्य की अनेक चुनौतियां है। वर्तमान समाज वैश्वीकरण तथा भूमण्डलीकरण से प्रभावित है। व्यक्ति को ऐसी स्थिति में समय के साथ चलने के लिए गतिशील होने की आवश्यकता है। इस प्रकार की जिम्मेदारियों को निभाने के लिए साहित्य को ऐसे विचार रखने की आवश्यकता है जिससे समाज के प्रत्येक व्यक्ति समसामयिक घटनाओं से संबंध स्थापित कर सके। इसके साथ ऐसा साहित्य हो जो व्यक्ति के अतर्मन में नई ऊर्जा उत्पन्न करने में सक्षम हो। इस संदर्भ में बाबू श्यामसुंदर दास लिखते है ''मेरे विचार के अनुसार इस समय हमें विशेषकर ऐसे साहित्य की आवश्यकता है जो मनोवेगों को परिष्कृत करने वाला, संजीवनी शक्ति का संचार करने वाला, चरित्र को सुंदर सांचे में ढालने वाला तथा बुद्धि को तीव्रता प्रदान करने वाला हो। साथ में इस बात की भी आवश्यकता है कि यह साहित्य परिमार्जित, सरस और ओजस्वनी भाषा में तैयार किया जाय।''9 अतः वर्तमान समय में ऐसे ही साहित्य की आवश्यकता है जो इस आपा–धापी की दुनिया में लोगों को जाग्रत कर सके।

साहित्य एक चिंतन है, आधार है, विकास के पथ पर अग्रसर होने का माध्यम है। साहित्य समाज को चैतन्यपूर्ण बनाने का प्रयास करती है। साहित्य का काम अन्तर्मन को छूने का है। साहित्य किसी व्यक्ति को रोजी–रोटी उपलब्ध ा कराने के लिए नहीं है बल्कि रोजी–रोटी किस प्रकार मिल सकती है उस पथ को प्रदर्शित करती है। समाज को और अधिक बेहतर बनाने के लिए साहित्य को समाज के बीच में जाना होगा। प्रत्येक समय हर स्थिति–परिस्थिति में समाज को साहित्य की आवश्यकता महसूस होती रही है। आज का समाज पश्चिमी संस्कृति से प्रभावित हो रहा है तथा दूसरे देशों की नकल कर रहा है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति के भाव बदल रहे है, भौतिकवादी हो रहे है तथा उनके अन्दर से मानवता का ह्रास हो रहा है। इनको सचेत करने के लिए साहित्य ही एकमात्र माध्यम है और उस साहित्य में बुलंद आवाज की अन्तर्मन को झकझोर देने की, सत्य–असत्य, लाभ–हानि की पहचान कराने की शक्ति तथा मस्तिष्क को परिष्कृत करने के साथ ओजपूर्ण शैली में होने की आवश्यकता है।

समग्रतः कह सकते है कि साहित्य सदैव मानव हित में समर्पित था और आज भी अपने कर्त्तव्य से विमुख नहीं हुआ है। साहित्य और समाज का संबंध उसी प्रकार है जिस प्रकार शरीर तथा आत्मा का है। साहित्य समाज की डायरी है जिसके माध्यम से समाज के क्रमिक विकास के साथ वर्तमान की प्रत्येक जानकारी को ग्रहण कर सकते है। समाज की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनीतिक आदि से संबंधित अधिकार व कर्त्तव्य की सीमाओं तथा दायित्व का बोध साहित्य ही कराता है।

समाज के विकास क्रम को जानने के लिए साहित्य की शरण में जाना पड़ता है। साहित्य अतीत की जातिगत, व्यक्तिगत तथा धर्मगत आदि से संबंधित सांस्कृतिक, राजनीति तथा सामाजिक स्थिति जानने में सहायक सिद्ध होता है। इसके अलावा उनकी वर्तमान स्थिति को समझकर उनके उन्नति तथा अवनति को जानने में सफल होते है। इसके अलावा आगामी जरूरतों के आधार पर साहित्य सृजन किया जाता है। जिससे बंधुत्व की भावना एवं मानवता की भावना आदि किसी भी भारतीय के मन से ओझल न हो। साहित्य और समाज हमेशा ही आपस में एक–दूसरे की सहायता के साथ प्रगति पथ पर अग्रसर है। साहित्य और समाज अन्योन्याश्रित हैं, जिसकी एक–दूसरे के बिना कल्पना नहीं किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्यामसुंदर दास, हिन्दी निबंधमाला, भाग–1, पृ. 48।
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी, साहित्य सहचर, पृ. 3।
3. श्यामसुंदर दास, हिन्दी निबंधमाला, भाग–1, पृ. 48।
4. सं. गणपति तेली, करीब से स्वयं प्रकाश, पृ. 25।
5. सर्वेश्वर कविताएं–एक, पृ. 175।
6. सं. विद्याधर शुक्ल, साहित्य, समाज और आलोचना, पृ. 54।
7. डॉ. सुधेश, साहित्य के विविध आयाम, पृ. 28।
8. सं. सच्चिदानंद वात्स्यायन, साहित्य और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया, पृ. 48।
9. श्यामसुंदर दास, हिन्दी निबंधमाला, भाग–1, पृ. 50।

*****